JOURNAL OF THE ROYAL LAUREATES ACADEMY

www.rlaindia.org

भारतीय चित्रकला में आभूषण अलंकरण अभिकल्पना के सन्दर्भ में अध्ययन

पूजा

शोधार्थी, स्कूल ऑफ ह्यूमैनिटीज एंड कल्चर, विक्रांत विश्वविद्यालय, ग्वालियर

डॉ. देवेंद्र कुमार

प्रोफेसर, स्कूल ऑफ ह्यूमैनिटीज एंड कल्चर, विक्रांत विश्वविद्यालय, ग्वालियर

सार

जीवन की भौतिकता से जुड़े हुये आभूषणों का ऐतिहासिक अध्ययन सभ्यता और संस्कृति के संदर्भ में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। भारतीय संस्कृति के सन्दर्भ में इसका और भी अधिक महत्त्व बढ़ जाता है। भारतीय आभूषण जहाँ समाज के आर्थिक, सामाजिक तकनीकी पक्ष पर प्रकाश डालते हैं, वहीं जीवन के आध्यात्मिक, मनोवैज्ञानिक पक्ष तथा धार्मिक, दार्शनिक सामाजिक मान्यताओं की सशक्त अभिव्यक्ति को भी व्यक्त करते हैं। मनुष्य प्राचीन काल से पाषाण प्रतिमाओं को सौन्दर्य प्रदान करने हेतु उनमें आभूषण बनाये करता था। मौर्य शुंग युग में बनायी जाने वाली प्रतिमाओं में अलंकारों की बहुलता दिखायी देती हैं किन्तु गुप्त युग में ये अलंकार कम होता गया। इन प्रतिमाओं से उस युग की जानकारी भी प्राप्त होती है कि उस समय किस प्रकार के आभूषण प्रचलित थे। कुषाण युग के आभूषण शुंग युग की तुलना में विकसित नागरिक रूचि पर अधिक बल देते थे। इस युग के शिल्पियों द्वारा उस समय के धनवान व राजसी वर्ग में प्रचलित आभूषणों के आधार पर ही यक्ष-यक्षिणी, देव समुदाय तथा राजवर्ग की मूर्तियों में आभूषण का अंकन किया करते थे। कला के इन दो पृथक माध्यमों में आभूषणों के अंकन में अन्तर का कारण भिन्न जीवन बोध तथा आदर्शों में भिन्नता रही होगी। शुंग युगीन कला के आभूषण ग्रामीण एवं जनसाधारण के निकट दिखायी देते हैं। जबकि इसके विपरित कुषाण युग के आभूषण विलासपूर्ण तथा भव्य हैं।

सूचक शब्दः- भारतीय, चित्रकला, आभूषण, अलंकरण

आभूषण एक उपयोग अनेक (चेंजेबल आभूषण)

आभूषण के आधुनिकरण का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण चेंजेबल आभूषण के रूप में देखने को मिलती है। ये ऐसे आभूषण हैं जिनकों कई तरीकों से पहना जा सकता है। जैसे एक ही नैकलेस को भी मांगटीका, ब्रेसलेट, कमरबन्द या फिर ईयररिंग के रूप में भी पहन सकते हैं। विभिन्न धातुओं, मोतियों व रत्नों के मिश्रण से यह आभूषण तैयार किए जाते हैं। आजकल की स्त्रियाँ व बालिकाएँ चेंजेबल स्टड हूप, ईयररिंग्स को विशेष पसन्द करती है जिसमें बालियों व टॉप के नीचे स्टोन व मोती को वे अपनी कपड़ों के रंग अनुसार चेंज कर सकती है। इसी प्रकार गले में पहना जाने वाला नैकलेस को कमरबन्द व शिशफूल के रूप में भी पहना जा सकता है।

3डी आभूषण

यह समय एक नए परिवर्तन का है। समय की मांग को देते हुए इन दिनों 3डी आभूषणों का काफी चलन देखा गया है। मुम्बई के साथ-साथ अन्य मेट्रों शहरों के विभिन्न हिस्सों में 3डी आभूषणों को लेकर काफी संख्या में काम किया जा रहा है। इस प्रकार के आभूषणों में भी उडिमेनशनल टच दिया जाता है जिससे आभूषण ओर भी अधिक आकर्षक नजर आते हैं। 3डी आभूषणों में सोने के साथ-साथ रत्नों का भी इस्तेमाल किया जाता है। इन आभूषणों में जो उभार दिया जाता है वह अद्भूत होता है। 3डी आभूषणों मुख्य रूप से अंगूठियों के ऊपरी ओर लगा रत्न, मोती या कोई फूल की आकृति, जानवर व पक्षी की आकृति बनी होती है। ये आभूषण दिखने में भारी व हाथ में लेने पर हल्के महसूस होते हैं जो इन गहनों की खूबी है।

कुन्दन मीना में बदलाव

कुन्दन मीना की ज्वेलरी का फैशन राजा-महाराजाओं के समय से चला आ रहा है। ये आभूषण सांस्कृतिक विरासत को आज के युवाओं से जोड़ता है। समय की मांग को देखते हुए इनकी बनावट में भी काफी बदलाव आया है। आजकल कुन्दन मीना से निर्मित आभूषणों को हल्के वनज के गहनों में सम्मिलित किया जाने लगा है। कुन्दन की ज्वेलरी को नया रूप देने के लिए इसके साथ किस्टल को मैच किया जा रहा है। कुन्दन मीना के सस्ते विकल्पों में पोल्की और किस्टल की जड़ाऊ ज्वेलरी आजकल बाजारों में काफी चलन में हैं। क्रिस्टल व पोल्की रत्नों से ग्राहकों को रंगों के काफी विकल्प मिल जाते हैं वे अपने कपड़ों के अनुकुल ज्वेलरी का सही चयन कर पाते हैं। कुन्दन से निर्मित आभूषण बीकानेर या जयपुरी आभूषणों के रूप में भी जाना जाता है। राजस्थान का जयपुर शहर पारम्परिक रूप से भारत में

कुन्दन आभूषणों का केन्द्र रहा है।

फ्यूजन आभूषण

आजकल मिले-जुले रत्नों से तैयार आभूषणों का काफी प्रचलन है। इसमें पारम्परिक आभूषणों के साथ आधुनिक आभूषणों को मिलाया जाता है। यानी एक ही आभूषण में पोल्की के साथ हीरे और रंगीन रत्नों को शामिल किया जाता है। गले के सेट के साथ-साथ मांगटीका और बाजूबन्द में भी इस तरह के बदलाव देखने को मिल रहे है। आजकल दुल्हन खासकर तौर पर मिले जुले रत्नों के आभूषणों को खास पसन्द करती है। रत्नों के अतिरिक्त वाइट मेटल जैसे प्लेटिनम में जड़े डायमंड के सेट, ईयर रिंग्स, अंगूठियाँ आदि फैशन में है। यह इस प्रकार का फ्यूजन स्टाइल है जिसमें ज्वेलरी की डिजाइन का कांसेप्ट इंडियन होता है लेकिन स्टाइल और मेटल वेस्टर्न होते हैं।

व्हाइट गोल्ड व पिंक गोल्ड का प्रयोग

आभूषणों की दुनिया में खास बदलाव यह भी देखा जा रहा है कि पांरम्परिक पीले सोने के साथ वाइट गोल्ड भी खूब पसन्द किया जा रहा है। विदेशों में जिस प्रकार व्हाइट गोल्ड के साथ हीरों का प्रयोग होता है, उसी प्रकार भारत में भी व्हाइट गोल्ड के साथ हीरे, रूबी और पन्ने का प्रयोग बढ़ गया है। लोगों का मानना है कि यलो गोल्ड की जगह हीरा व्हाइट गोल्ड या पिंक गोल्ड पर ज्यादा आकर्षक दिखाई देता है। प्लेटिनम के लव बैन्ड और कपल बैन्ड का काफी फैशन है जो गिफ्ट देने के लिए शुभ माना जाता है। इनकी खास बात यह है कि इससे बने आभूषणों को पुरूष और महिला दोनों पसन्द करते हैं। युवाओं में आजकल यलो गोल्ड और प्लेटिनम फ्यूजन के अलावा आजकल प्लेटिनम रिंग, ईयररिंग, नेकलेस और पेन्डेन्ट भी फैशन में है। इसके अतिरिक्त प्लेटिनम के हीरे जड़ित सेट, अंगूठियाँ और ईयर रिंग्स आदि चलन में है।

रत्नों से निर्मित आभूषण

आज की मांग को देखते हुए बाजारों में रंगीन रत्नों की विस्तृत श्रेणी छाई हुई है। इसमें माणिक्य, पन्ना, मूंग और मोती सबसे अधिक लोकप्रिय है। ये सभी रत्न आभूषणों को आधुनिक लुक देते हैं। ग्रहों के दुष्ट प्रभावों से बचने के लिए जातक को रत्न धारण करने को कहा जाता है। यह रत्न मनुष्य अपनी राशिफल के अनुसार पहनता है और इन सभी रत्नों को एक निश्चित धातु में ही पहना जाता है। रत्नों की चमक पारदर्शिता उनकी कीमत बताती है। कहा जाता है जितनी अधिक चमक व गहरा रंग उतनी अधिक

कीमत।

रत्नों की कीमत अधिक होने के कारण सामान्य वर्ग के लोग पत्थरों से निर्मित गहनों को महत्व देने हैं। खूबसूरत डिजाइन व रंग के कारण लोग सोने-चाँदी की जगह आज स्टोन्स को अधिक महत्व देने लगे हैं। हीरा, पुखराज जैसे कीमती स्टोन को छोड़ दे तो अन्य कम कीमत के स्टोन्स ग्राहकों को आकर्षित कर रहे हैं। स्टोन के गहनों की खरीदारी में सबसे अधिक डिमांड अंगूठी की है। इसके अतिरिक्त माला, ब्रेसलेट व टॉप्स की भी मांग बढ़ रही है।

थीम पर आधारित आभूषणों का चलन

आजकल थीम पर आधारित आभूषणों का चलन अत्याधिक देखने को मिलता है। यह डिजाइन प्रकृति पर आधारित फूलों, पक्षियों खासकर मोर की आकृति के डिजाइन को लेकर आभूषण बनाए जा रहे हैं। महिलाएँ अपने विवाह, त्यौहार व अन्य उत्सवों में लंहगे से मैचिंग ज्वेलरी बनवाती है। यह ज्वेलरी हीरे, कुन्दन, स्वर्ण व रत्नों पर आधारित होती है।

आर्टिफिशियल ज्वेलरी

आर्टिफिशियल गहनों की आजकल काफी मांग है। यह गहने स्टेटस सिंबल भी माने जाते हैं। आजकल के युवाओं में यह मानसिका बन गई है कि जितने अधिक गहने उतना ही अमीर व्यक्ति। अनजान व्यक्ति के सामने गहना ही पहचान स्थापित करता है। हर वक्त सोने व रत्नों के गहने से लदा रहना आसान नहीं होता। मंहगे गहनों के गुम हो जाने पर परेशानी अलग। ऐसे में आजकल बाजारों में आर्टिफिशियल गहनों का बेहतर विकल्प लोगों के सामने अच्छा साबित हो रहा है। उच्च क्वालिटी होने के कारण असली व नकली में फर्क कर पाना मुश्किल होता है। ऐसे गहनों के खाने पर ज्यादा आर्थिक क्षति भी नहीं होती।

पूर्व काल की चित्रकला

प्रागैतिहासिक चित्रकला मानव जीवन के उदय के साथ ही कला का भी आरम्भ हुआ। प्रागैतिहासिक युग की ऐसी अनेक गुफाएँ और चट्टाने हमें उपलब्ध हुई हैं, जिन पर खुदे हुए चित्रों को देखकर आदिम मानव की कलाभिरूचि का सहज ही परिचय मिलता है। स्पेन, फाँस, दक्षिण रोडेशिया, पेरू, अलास्का, लौसेक्स और भारत आदि संसार के विभिन्न देशों में आदिम युग की ऐसी चित्रांकित गुफाएँ प्राप्त हुई हैं। प्रागैतिहासिक मानव की कला प्रगति के परिचायक कुछ तथ्यों के आधार पर सहज ही यह कहा जा सकता है भारत में अत्यन्त प्राचीन काल से कला का उदय हो चुका है। कुछ विद्वानों ने संसार के

प्रागैतिहासिक चित्रों की प्राचीनता का विश्लेषण करते हुए, भारत में उपलब्ध चित्रों को अमेरिका तथा यूरोप के बाद रखा है। ये चित्र मध्यप्रदेश के आदमगढ़, रायगढ़, बिहार के चक्रधरपुर, सिंहनपुर, होशंगाबाद, मिर्जापुर के लखुनियाँ, कोहवर और भल्डांरिया आदि स्थानों से प्राप्त हुए हैं। इन चित्रों का समय लगभग 3000 ई. पूर्व निर्धारित किया गया है। मिर्जापुर, सिंहनपुर, जोगीमारा आदि से प्राप्त चित्र खुदी चट्टाने प्रागैतिहासिक युग के सिद्ध हो चुके हैं। इन चट्टानों पर लाल-पीले रंगों से अंकित रेंगते हुए कीड़ों, पशुओं, पक्षियों, मनुष्यों और असुरों की आकृतियाँ चित्रित हैं। चित्रकला के ये प्रागैतिहासिक अवशेष कितने प्राचीन है इसका ठीक-ठीक अनुमान लगाना कठिन है।

प्रागैतिहासिक युग की जो रेखाकृतियाँ और मिट्टी, काष्ठ, धातु तथा शिलाओं पर पशु-पक्षी एवं मानव आकृतियों का चित्रण देखने को मिलता है उनका अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि आज की भाँति आदिम मानव भी सौन्दर्योपासक था। कुछ चित्रांकित चट्टानों का उल्लेख इस प्रकार है। सरहाट में शिला पर लाल मिट्टी के रंग से चित्रित तीन अश्व उल्लेखनीय हैं। मालवा में चित्रांकित ऐसी गाड़ी मिली है, जिसमें पहिये नहीं है और जिस पर एक व्यक्ति बैठा हुआ है तथा उसके दोनों ओर दो अनुचर धनुष बाण तथा दण्ड लिये खड़े हैं। करियाकुण्ड में ऐसा प्रागैतिहासिक चित्र मिला है, जिसमें एक बारहसिंघा और अनेक धनुर्धारी व्यक्ति उसका पीछा करते हुए दर्शाये हुये हैं। इस विषय की सबसे सुन्दर और उल्लेखनीय चित्र सामग्री पंचमढ़ी से प्राप्त हुई है। ये चित्र वहाँ के प्रसिद्ध महादेव पर्वत के चारों ओर अवस्थित अनेक चित्रित गुफाओं से प्राप्त हुए हैं। इसी प्रकार के कुछ चित्र होशंगाबाद के निकट आदमगढ़ नामक प्रागैतिहासिक स्थान से भी मिले हैं।

सिन्धु घाटी सभ्यता के कलावशेष

सिन्धु घाटी के विस्तुत क्षेत्र में मोहनजोदड़ो तथा हड़प्पा ही एक मात्र दो ऐसे नगरों का पता लग सका है, जहाँ से प्राप्त विभिन्न प्रकार की सामग्री तत्कालीन इतिहास, संस्कृति, कला और आर्थिक जीवन का साक्ष्य प्रस्तुत करती है। इस बात का ज्ञान हमें सिन्धु घाटी सभ्यता से प्राप्त सामग्री से चलता है। वहाँ का सामान्य जन-जीवन कला के प्रति अत्यधिक रूप से आसक्त था। वह कलानुरागी समाज अपने अंग-उपागों को विभिन्न भाँति के आभूषणों से अलंकृत करता था। हड़प्पा और मोहनजोदड़ो से प्राप्त काँस्य की नर्तकी, प्रस्तर घड़, वृषभ और मुहर जिस पर पशुओं के बीच त्रिशूलधारी मानव पाल्थी मारे बैठा है। अतीतकालीन भारत की कलाप्रियता के अमिट प्रणाम है।

सिन्धु घाटी सभ्यता के दोनों नगरों से प्राप्त कलात्मक अवशेष, जिनमें विविध भाव-भंगिमाएँ, सुन्दर मुद्राएँ

और श्रृंगार-प्रसाधन के अनेक परिष्कृत रूप देखने को मिलते है जो अतीत कालीन भारत के गहन कलानुराग का इतिहास प्रस्तुत करते हैं। वहाँ से प्राप्त बर्तनों, पत्थरों, काँस्य मूर्तियों, मृण्मूर्तियों और मुहरों पर की गयी चित्रकारी भारतीय चित्रकला की प्राचीनतम एवं उत्कृष्ट रूप प्रस्तुत करती है। सिन्धु घाटी के अतिरिक्त लोथल (अहमदाबाद), मिर्जापुर, पटना, काठियावाड़, उदयगिरि और महाबलीपुरम आदि अनेक स्थानों में प्रागैतिहासिक कला सामग्री प्राप्त हुई है। हड़प्पा सभ्यता के लोग धातु से मूर्ति निर्माण की प्रक्रिया से परिचित हो चुके थे। वस्तुत ये औपचारिक रूप से 'काँस्य युगीन सभ्यता' के पोषक थे और वे लोग औजार एवं उपकरणों के निर्माण हेतु ताँबा और काँसा नामक धातुओं का प्रयोग करते थे।

सफेद हाथी जैन तीर्थ पर नेमीनाथ पर पवित्र जल बरसाते हुए नामक चित्र में देवाकृति नेमीनाथ को काले रंग से चित्रित किया गया है जिस कारण आभूषण अत्यन्त स्पष्ट रूप से दर्शनीय हैं। नेमीनाथ के सिर पर मुकुट जो स्वर्ण व मोतियों से निर्मित है जिसके दो तरफ कमल की कलंगी भी अंकित की गई है। कानों में गोल बड़े कुण्डल, जिसके मध्य मे लाल रंग का रत्न व बाहरी तरफ सफेद छोटे आकार के मोतियों को सुसज्जित किया गया है। इसी प्रकार देवाकृति के कण्ठ मे कण्ठहार जो स्वर्ण धातु से निर्मित है। अन्य हार में वक्षस्थल तक लटकती मोतियों की माला जिसमें बीच में पेन्डेन्ट भी अंकित किया गया है। पद्मासन मुद्रा में बैठे तीर्थकर पुरूषाकृति के गले में सफेद मुक्ताओं का बना लम्बहार जो कंधों के ऊपर से नीचे की ओर पैरों तक धारण किया गया है। प्रायः पुरूषाकृतियों में यह आभूषण अधिक देखने को मिलता है। हाथों में बाजूबन्द चौकोरनुमा आकार का बनाया गया है। जबकि कलाई में कड़े व पैरों में पायल भी अंकित किए गए हैं। देवाकृति पर अंकित सभी आभूषणों को स्वर्ण व सफेद मोतियों से बनाया गया है। (चित्र सं. 24)

चित्र सं. **1.** *सफेद हाथी जैन तीर्थ पर नेमीनाथ पर पवित्र जल बरसाते हुए, माण्डू कल्पसूत्र,* **1439** *ई.,* **11.5x25** *से.मी., राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली, पंजीयन सं.* **49.175**

चित्र सं. **2.** *चतुर्भुजा लक्ष्मी, सास्वत ख्यातवृत्ति,* **18** *वीं शती, राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान-जोधपुर (राज.), ग्रन्थ' सास्वततख्यांतवृति' में संग्रहित*

चतुर्भुजा लक्ष्मी नामक चित्र में माता लक्ष्मी जी ने सिर पर सोने से निर्मित मुकुट पहना है जिस पर जवाहरात का जड़ाऊ काम भी अंकित है। इसके अतिरिक्त जैन चित्रशैली में कलंगी भी नारी आकृतियों के

शिरोभूषण के रूप बनाई गई है। यह आकार में छोटी स्वर्ण धातु से निर्मित है जिस पर मोतियो का जड़ाऊ काम हो रखा है। रूपाकृति के नाक में सोने के पतले गोलाकार तार मे पिरोये गये तीन मोतियों की नथ भी अंकित की गई है जिसमें दो सफेद मोतियों के मध्य लाल मोती स्थित है जो नथ की शोभा बढ़ाने अहम भूमिका निभा रहा है। कानों में गोल कुण्डल जो फूलनुमा आकृति में दर्शाए गए हैं। गले में चन्दनहार जो अनेक स्वर्ण जंजीरो को मिलाकर बनाया जाता है। इस हार में एक लड़ी दूसरी लड़ी से क्रमशः बड़ी होती जाती है। अन्य कण्ठहार वक्षस्थल से नीचे नाभि तक बनाया गया है जिसमें पन्डेन्ट भी अंकित है। हाथों में चूड़ियाँ जो स्वर्ण धातु से निर्मित है जिसके पीछे या बीच में कड़े भी बनाए गए हैं। पैरों में मोतियों की पायल भी अंकित की गई है। (चित्र सं. 25)

बौद्ध कला का उद्गम

जोगीमार गुफा

सरगुजा रियासत की जोगीमारा गुफा के उपलब्ध भित्ति चित्रों से भारतीय चित्रकला के प्रामाणिक इतिहास का आरम्भ होता है। रामगढ़ पहाड़ियों में जोगीमारा तथा सीता-बेंगा नामक दो गुफायें पास-पास में है। सीता-बेंगा गुफा एक नाट्यशाला थी। इसी के निकट दूसरी गुफा जोगीमारा है। पहले इसे एक देवदासी का निवास स्थान समझा गया था पर उसमें प्राप्त शिला-लेख का जो नवीन अर्थ किया गया है, उसके अनुसार वह वरूण का मन्दिर था जिस की सेवा में सुतनुमा नामक देवदासी रहती थी। जोगीमारा गुफा दस फीट लम्बी और छः फीट चौड़ी है। इसकी छत में लाल रेखाओं द्वारा पेनल विभाजित करके चित्रांकन किया गया है। छत इतनी नीची है कि उसे हाथ से स्पर्श किया जा सकता है। ये चित्र ऐतिहासिक काल की भारतीय चित्रकला के प्राचीनतम उपलब्ध नमूने हैं।

अजन्ता की गुफाएँ

जोगीमार की गुफाओं के बाद अजन्ता के भित्ति चित्रों का स्थान आता है। अजन्ता बौद्ध चित्रकला का प्रमुख केन्द्र है। अजन्ता की विहार-गुफाओं में न केवल चित्रकला, अपितु स्थापत्य कला और मूर्तिकला का भी अपूर्व संयोग देखने को मिलता है। अजन्ता की कला-कृतियों की लोकप्रियता का एक मात्र कारण है भक्ति, उपासना और प्रेम की त्रिवेणी का मनोरम संयोग। अजन्ता में कुल मिलाकर 30 गुफाएँ है, जिनके दो भाग किये जा सकते हैं, चैत्य गुफाएँ और विहार गुफाएँ है। पहले भाग की गुफाओं को प्रार्थना की दृष्टि से और दूसरे भाग की गुफाओं को रहने तथा अध्ययन करने की दृष्टि से बनाया गया है। सभी गुफाओं में चित्र बने हुए हैं और वह भी एक ही शैली के। किन्तु पहली, दूसरी, नौवीं, दसवीं, सोलहवीं और

सत्रहवीं गुफाओं के चित्र ही अब तक सुरक्षित रह सके हैं।

अजन्ता की कला-कृतियों का निर्माण मौर्य, शुंग, सातवाहन, कुषाण, वाकाटक और गुप्त आदि अनेक राजवंशों के समय निरन्तर होता गया। लगभग प्रथम शती ई. से लेकर सातवीं शती ई. तक अजन्ता की कलाकृतियों का विशेष रूप से निर्माण होने के साथ-साथ पुनरूद्धार और पुनः संस्कार भी होता रहा। अजन्ता के चित्रों में लगभग बीस प्रकार की विभिन्न शैलियों का सम्मिश्रण है। किन्तु उनमें प्रधानता गुप्त शैली की है। गुप्त सम्राटों के योगदान तथा कला प्रेम की साक्षी पहली, सोलहवीं और सत्रहवीं गुफाएँ है। अजन्ता के समस्त कला-वैभव में उनका सर्वाधिक महत्त्व है। पहली गुफा का अवलोकितेश्वर का चित्र, सोलहवीं गुफा का गृह त्याग सम्बन्धी चित्र और सत्रहवीं गुफा का माता-पुत्र विषयक चित्र विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

अजन्ता के चित्र विषय की दृष्टि से तीन प्रमुख भागों में विभक्त किए गए हैं: आलंकारिक, रूपभैदिक और वर्णनात्मक। पहली श्रेणी के चित्रों में पशु-पक्षियों से युक्त पुष्प-लताएँ, अलौकिक पशु, राक्षस, गरूड़, गन्धर्व, यक्ष, नाग और अप्सरा आदि को रखा गया है। दूसरी श्रेणी के चित्रों में बुद्ध, बोधिसत्व, राजा-रानियाँ आदि का समावेश किया गया है। तीसरी श्रेणी के चित्रों में जातक ग्रन्थों से सम्बद्ध अनेक कथाएँ हैं-जिनमें भगवान तथागत के जीवन की घटनाओं का कथारूप में चित्रण किया गया है। अधिकतर चित्र इसी श्रेणी के हैं।

अजन्ता के चित्रों की ख्याति संसार के कोने-कोने में व्याप्त हो चुकी है। जिसका प्रमुख कारण चित्रों के भाव प्रवणता है। अजन्ता में चित्रित आकृतियों में रेखाओं की सूक्ष्मता एवं प्रवहमानता के दर्शन होते हैं। जिसमें गेरूवा, रामरज, हरा, काजली, नीला, पीला, काला और सफेद रंगों का विशेष प्रयोग हुआ है। रंग गहरे होने पर भी भारीपन से मुक्त हैं। जिन चट्टानों (पत्थरों) पर चित्र अंकित है, वे खुरदुरे है और उनको विशेष प्रकार के लेप से तैयार किया गया है।

आधुनिक काल की चित्रकला

तंजौर शैली

प्राचीन कला में चोल राजाओं द्वारा संरक्षित 'तंजौर शैली' विभिन्न कलाओं का समृद्ध केन्द्र रहा है। सन् 1833-55 ई. में 'राजा शिवाजी' के राजकाल में 18 कलाकारों के परिवारों को राज्याश्रय मिला हुआ था, जो 'हाथी दाँत' एवं 'काष्ठफलक' पर चित्राकृतियाँ बनाते थे। रामायाण एवं कृष्ण लीला पर आधारित जो चित्रकृतियाँ बनायी गई, उनमे गाढ़े लेप से आकृतियाँ बनाकर उभार का हल्का प्रभाव दिया जाने लगा।

बाद में जल रंग से चित्र चित्रित करने के पश्चात् उनमें सोने के पत्रों एवं बहुमूल्य पत्थरों को भी लगाया जाने लगा। "बालकृष्ण" नामक चित्र तंजौर कला का उत्तम उदाहरण है। इसके अतिरिक्त तैल रंग में व्यक्ति चित्र भी बनाये गये जो आज तंजौर के राजमहल में सुरक्षित है। सन् 1855 ई. में शिवाजी की मृत्यु के पश्चात् इस राजवंश का अंत हो गया, साथ ही चित्रकारों का संरक्षण भी समाप्त हो गया।

कालीघाट या बाजार चित्रकला

कालीघाट या बाजार चित्रकला का उद्भगम् लगभग 19वीं शताब्दी में कोलकात्ता के कालीघाट मंदिर में माना जाता है। बंगाल की लोककला में पट का विशेष स्थान है। साधारणतया पट का तात्पर्य चित्र से है। पट चित्रित करने वाले शिल्पी पटुआ कहे जाते हैं। जो निम्न जाति के अशिक्षित लोग होते हैं। पट चित्रों के अन्तर्गत देवी-देवताओं के चित्र बनते थे। इन चित्रों का प्रयोग पूजा हेतु किया जाता था। पट चित्रों के शुरूआत धार्मिक रूप में हुई। पट चित्रों की भाषा सरल, सीधी और आडम्बरहीन थी, रेखा पुष्ट थी, वस्तु का स्वरूप सार संक्षिप्त तथा गत्यात्मक होता था। कथा का चित्रण इस भांति किया जाता था कि आम आदमी उसे समझ सके। पटुओं के काम करने का तरीका बहुत ही स्वाभाविक था। पटु वास्तव की हुबहू नकल नहीं करते थे। केवल उसका सार ही चित्रित करते थे। विषय-वस्तु की दृष्टि से पट को निम्न भागों में विभाजित किया जा सकता है जिसे पौराणिक चित्र, ऐतिहासिक चित्र, कथा चित्र, सामाजिक चित्र, पशु-पक्षी चित्र। बंगाल के पट को असित कुमार हाल्दार ने दो वर्गों में विभाजित करते हुए लिखा है" एक प्रकार के तो वे चित्र हुआ करते थे जो केवल मेलों में बिकने के लिए बनाये जाते थे और दो-दो पैसों में बिकते थे। दूसरे प्रकार के चित्र बड़े आकार के और जड़े हुए होते थे और वे ऐसे कम से अंकित जाते थे। कि रामायण, पुराण तथा कृष्ण लीला की घटनाओं का कमबद्ध वर्णन आ जाए। पट के चित्रों में "श्री कृष्ण लीला, दशावतार तथा तांत्रिक देवी-देवताओं के स्वरूप चित्रकार अंकित किया करते थे।

पटुआ शिल्प और कालीघाट चित्रों को बहुत से आलोचकों ने एक ही श्रेणी में रखा है। कालीघाट वस्तुतः अन्य केन्द्रों की भांति एक मुख्य केन्द्र था। जहाँ पर व्यवसायी कलाकारों ने अनेक संख्या के चित्र बनाए। कालीघाट मन्दिर की धार्मिक मान्यता के कारण सालभर यहाँ यात्रियों का आवागमन बना रहता था। इसी मन्दिर की सीढ़ियों पर बैठ कर पटुआ चित्रकार विभिन्न देवी-देवताओं, पशुओ एवं सामाजिक विषयों को चित्रित किया करते थे। पटुआ पहले स्वयं रेखांकन करते थे और बाद में अपने सहयोगियों द्वारा रंग भरवाते थे और ये रंग प्रायः रेखांकन से बाहर निकले जाते थे। यद्यपि यह कलाकार अपनी पुरानी रीति में कार्य करने का प्रयास किया किन्तु इन चित्रों पर कुछ हद तक 'कम्पनी शैली' का प्रभाव दृष्यव्य होता है। समय के साथ छापा तकनीक के आने पर कालीघाट चित्रों की मांग कम होती गई। सुप्रसिद्ध चित्रकार

काली चरण और निवारण चन्द्र घोष की मृत्यु के साथ ही पटुआ कला भी विलुप्त हो गयी। कालीघाट के रेखांकन से प्रभावित होकर यामिनी राय जैसे महान कलाकार सामने आए जिनके चित्र आज भी सभी का मन मोह लेते हैं।

19वीं व 20वीं शती से प्राप्त आभूषण अलंकरण

सैन्धव सभ्यता व तक्षशिला-सिरकप से प्राप्त आभूषणों के बाद राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली में 19वीं व 20वीं शती के काफी संख्या में आभूषणों का संग्रह देखने को मिलता है। 19वीं शताब्दी शान और शौकत का काल था। राजा-महाराजाओं, नवाबो ने मुगल बादशाहों की शैली को अपनाया। आभूषण दरबारी और उच्च वर्ग के लोगों की जीवन शैली का अनिवार्य अंग थे। महाराजाओं के लिए अलंकरण धारण करना किसी परम्परा का निर्वाह या निजी अभिरूचि की अभिव्यक्ति मात्र नहीं था अपितु ये आभूषण उनकी शान-औ-शौकत, सता और सम्पत्ति के भी प्रतीक थे। सिरपेंच व हीरों, मणिक्यों और पन्ना से जटित सुन्दर हार और यहाँ तक कि चंवर कमलदान व मंजुवाएँ जैसी वस्तुएँ भी उनकी शान-औ-शौकत की परिचायक थी।

महाराजाओं का परिधान पारम्परिक और आधुनिक एवं भारतीय और पश्चिमी शैली का मिश्रण था। वे हीरो और बहुमूल्य रत्नों से जटित सिरपेंच से सुसज्जित पगड़ी धारण करते थे। पगड़ी की चुन्नटो को वे सुन्दर कलंगी से सजाते थे। उनकी पगड़ियाँ यूरोपिय शैली के शिरोभूषण, हैट पिनो आदि से भी सजी होती थी। पगड़ी अलंकरण राजतंत्र का प्रतीक था। 19वीं शताब्दी से सिरपेंच, कलंगी और तुर्रा पर काफी अलंकरण किया जाने लगा और इन पर चमचमाते रत्न जड़े जाने लगे। इस प्रकार ये पगड़ी अलंकरण शान-औ-शौकत के परिचायक बन गए।

निष्कर्ष

राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली से प्राप्त आभूषणों के संक्षिप्त विवरण से यह ज्ञात होता है कि प्राचीन आभूषणों से समकालीन आभूषणों तक उसके डिजाइन, धातु व अलंकरण हेतु प्रयोग में की जाने वाली सामग्री में काफी अंतर देखा जा सकता है। प्राचीन समय में आभूषण में अक्सर किमती पत्थरों, सिक्के या अन्य कीमती वस्तुओं का इस्तेमाल किया जाता था। मोहनजोदड़ो और हड़प्पा से प्राप्त आभूषण परिष्करण और दक्षता को प्रदर्शित करते हैं। इन आभूषणों से चार हजार वर्ष पूर्व के कच्चे माल की विविधता, धातु-विज्ञान की जानकारी, निर्माण तकनीक और रूपाकार एवं शैलियों की विविधता झलकती है। सिन्धु घाटी सभ्यता से प्राप्त आभूषण समकालीन आभूषणों से काफी मिलते जुलते हैं जिसमें शीर्ष

अलंकरण-चूड़ामणि, ललाटपट्ट-बोरला, कंगन-कड़े, जड़ाऊ पिन-ब्रोच, ब्रेसलेट- दस्तबंद आदि यह सभी आभूषण अलंकरण में कहीं न कहीं एक दूसरे से मिलते जुलते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. **अग्रवाल**, **गिर्राज किशोर** : कला और कलम (भारतीय चित्रकला का आलोचनात्मक इतिहास), अलीगढ़, 1971
2. **अग्रवाल एवं शर्मा** : रूपप्रद कला के मूलाधार, मेरठ, 1975
3. **अग्रवाल**, **आर.ए**. : कला विलास, भारतीय चित्रकला का विवेचन, मेरठ, 1987
4. **अन्विता आन्नद** : गुप्तकाल में नारियों की स्थिति, राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1992
5. **अग्रवाल**, **वासुदेव नाथ** : अजन्ता की गुफायें, मिलन्दि प्रकाशन, 1960
6. **अग्रवाल**, **दिनेश चन्द्र** : कम्पनी शैली (एक ऐतिहासिक संदर्भ), आकृति, 1975
7. **अग्रवाल**, **वासुदेव शरण** : कादम्बरी एवं सांस्कृतिक अध्याय, बनारस, 1970
8. **उपाध्याय**, **नर्मदा प्रसाद** : प्राचीन भारत में रूप श्रृंगार, जयपुर, 1997
9. **आचार्य भावया** : भारतीय चित्रांकन परम्परा, नई दिल्ली, 2003
10. **कोठारी**, **गुलाब** : गहने क्यों पहने? सामाजिक-सांस्कृतिक-वैज्ञानिक अध्ययन, पत्रिका प्रकाशन, जयपुर, 2017
11. **गिरि**, **कमल** : भारतीय श्रृंगार, मोतीलाल बनारसी दास, वाराणसी, 1987
12. **गहलोत**, **सुखवीर सिंह** : राजस्थान का संक्षिप्त इतिहास, जोधपुर, 1959
13. **गोस्वामी**, **प्रेम चन्द्र** : राजस्थान की लघु चित्र शैलियाँ, जयपुर, 1972
14. **गुप्ता**, **नीलिमा** : भारतीय लोक कला (छत्तीसगढ़ के संदर्भ में), दिल्ली, 2010
15. **गोस्वामी**, **प्रेमचन्द्र** : भारतीय कला के विविध स्वरूप, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 1997

16. **गुप्ता**, **सन्तोष** : जैन संस्कृत पुराणों में नारी-विमर्श, गौतम बुक कम्पनी, राजापार्क, जयपुर, 2011

17. **गैरोला**, **वाचस्पति** : भारतीय चित्रकला का संक्षिप्त इतिहास, संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण, लोक-भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1985

18. **गोस्वामी**, **प्रेमचन्द्र** : आधुनिक भारतीय चित्रकला के आधार स्तम्भ, जयपुर, 1975

19. **गणपत्ये**, **प्रमोद** : भारतीय लघु चित्रकला, नई दिल्ली, 1994

20. **गैरोला**, **वाचस्पति** : भारतीय संस्कृति और कला, लखनऊ, 1973

21. **गार्डन**, **डी.एच**. : भारतीय संस्कृति की प्रागैतिहासिक पृष्ठभूमि, पटना, 1970

22. **चतुर्वेदी**, **ममता** : समकालीन भारतीय कला, जयपुर, चौथा संस्करण, 2013

23. **चन्द्रमणि सिंह** : राजस्थान की संस्कृति परम्परा, जयपुर, 2000

24. **जोशी**, **गोवर्धनलाल** : नाथद्वार की चित्रकला, वार्षिकी, 1963

25. **जैन**, **जगदीश चन्द्र** : जैन आगम साहित्य में भारतीय समाज, वाराणसी, 1965

26. **जैन**, **कमल** : हरिभद्र साहित्य में समाज एवं संस्कृति (सं. सिंह अशोक कुमार) वाराणसी, 1994

27. **झा**, **शशि** : भारतीय चित्रकला और मूर्तिकला में नारी स्वरूप, मानसी प्रकाशन, मेरठ, 1992

28. **तिवारी**, **मारूतिनंदन प्रसाद** : जैन प्रतिमा विज्ञान, वाराणसी, 1981

29. **तिवारी**, **पुष्पा** : प्राचीन भारतीय आभूषण, इलाहाबाद, 1992

30. **द्विवेदी**, **प्रेमशंकर**; **द्विवेदी**, **मनीष कुमार** : भारतीय भित्ति चित्रकला, वाराणसी, 2010